

**प्रीति गुप्ता एवं अन्य
बनाम
झारखंड राज्य एवं अन्य
(आपराधिक अपील संख्या 1512/2010)**

13 अगस्त, 2010

[दलवीर भंडारी एवं के.एस. पणिक्कर राधाकृष्णन, न्यायाधीशगण]

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973:

धारा 482 - उच्च न्यायालय की अंतर्निहित शक्तियां - प्रयोग - आपराधिक शिकायत धारा 498-ए, 406, 341, 323 और 120-बी और पति के तात्कालिक रिश्तेदारों के विरुद्ध अधिनियम 1961 की धाराएँ 3 और 4 के तहत मामला दर्ज - सम्मन जारी करना - शिकायतकर्ता की विवाहित भाभी और देवर (अपीलकर्ता) द्वारा चुनौती - उच्च न्यायालय ने याचिका खारिज कर दी - अपील पर, माना गया: शिकायत में अपीलकर्ताओं के विरुद्ध कोई विशिष्ट आरोप नहीं थे और न ही गवाहों द्वारा उनकी कोई भूमिका बताई गई थी - उक्त रिश्तेदार अलग-अलग शहरों में रह रहे थे और कभी भी शिकायतकर्ता के घर नहीं गए या कभी-कभार ही गए - शिकायत में उनका उल्लेख उन्हें परेशान करने और अपमानित करने के लिए किया गया था - शिकायतकर्ता को शिकायत को आगे बढ़ाने की अनुमति देना कानून की प्रक्रिया का दुरुपयोग होगा - न्याय के हित में, अपीलकर्ताओं के विरुद्ध शिकायत रद्द की जाती है - उच्च न्यायालय का आदेश रद्द किया जाता है - दंड संहिता, 1860 - धाराएँ 498-ए, 406, 341, 323 और 120-बी - दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961 - धारा 3 और 4.

न्यायालयों की अंतर्निहित शक्तियाँ - इसका दायरा और दायरा - व्याख्या की गई।

कानून: धारा 498-ए आईपीसी के तहत आपराधिक शिकायतों में वृद्धि - धारा 498-ए के तहत बड़ी संख्या में शिकायतें सद्भावनापूर्ण नहीं हैं, बल्कि परोक्ष उद्देश्य से दायर की गई हैं - विधानमंडल को पूरे प्रावधान पर गंभीरता से पुनर्विचार करने और मौजूदा कानून में उपयुक्त बदलाव करने की आवश्यकता है।

नैतिकता: कानूनी नैतिकता - भारतीय दंड संहिता की धारा 498-ए के तहत आपराधिक शिकायतों में वृद्धि - अधिवक्ताओं का कर्तव्य - निर्णय: अधिवक्ताओं को पेशे की महान परंपराओं को बनाए रखना चाहिए - उन्हें यह सुनिश्चित करना चाहिए कि समाज का सामाजिक ताना-बाना, शांति और सौहार्द बरकरार रहे - उन्हें धारा 498 ए के तहत प्रत्येक शिकायत को एक बुनियादी मानवीय समस्या के रूप में लेना चाहिए और उस मानवीय समस्या के सौहार्दपूर्ण समाधान पर पहुंचने में पक्षों की मदद करने के लिए गंभीर प्रयास करना चाहिए।

प्रतिवादी संख्या 2 की शादी 'के' से हुई थी। उसने अपने पति, ससुर, सास, अविवाहित देवर और विवाहित ननद के खिलाफ दंड संहिता की धारा 498-ए, 406, 341, 323 और 120-8 के साथ दहेज निषेध अधिनियम, 1961 की धारा 3 और 4 के तहत आपराधिक शिकायत दर्ज कराई। न्यायिक मजिस्ट्रेट ने संज्ञान लिया और

अपीलकर्ताओं, अर्थात् विवाहित ननद और अविवाहित देवर के खिलाफ समन जारी किया। अपीलकर्ताओं ने इस आधार पर समन के आदेश को चुनौती दी कि उनके खिलाफ पूरी शिकायत में कोई विशेष आरोप नहीं था; उन्हें आपराधिक मामले में झूठा फंसाया गया था क्योंकि वे अलग-अलग शहरों में रह रहे थे और कभी भी उस जगह नहीं गए या शायद ही कभी गए जहां शिकायतकर्ता रहता था। उच्च न्यायालय ने याचिका खारिज कर दी। इसलिए, अपीलकर्ताओं ने तत्काल अपील दायर की।

अपील स्वीकार करते हुए न्यायालय ने

निर्णय: 1.1 प्रत्येक उच्च न्यायालय के पास वास्तविक और पर्याप्त न्याय करने के लिए, जिसके प्रशासन के लिए ही वह अस्तित्व में है, या न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने के लिए, एक्स डेबिटो जस्टिटिया कार्य करने की अंतर्निहित शक्तियाँ हैं। धारा 482 सीआरपीसी के तहत अंतर्निहित शक्ति का प्रयोग किया जा सकता है: संहिता के तहत आदेश को प्रभावी बनाने के लिए; न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने के लिए, और अन्यथा न्याय के उद्देश्यों को सुरक्षित करने के लिए। [पैरा 15] [1178-डी-ई]

1.2 धारा 482 सीआरपीसी के तहत उच्च न्यायालय के पास मौजूद शक्तियाँ बहुत व्यापक हैं और शक्तियों की प्रचुरता के कारण इसके प्रयोग में बहुत सावधानी की आवश्यकता होती है। न्यायालय को इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि इस शक्ति का प्रयोग करते समय उसका निर्णय ठोस सिद्धांतों पर आधारित हो। निहित शक्ति का प्रयोग वैध अभियोजन को दबाने के लिए नहीं किया जाना चाहिए, लेकिन न्याय को आगे बढ़ाने के लिए शक्ति का उपयोग करने में न्यायालय की विफलता भी गंभीर अन्याय का कारण बन सकती है। उच्च न्यायालय को आम तौर पर ऐसे मामले में प्रथम दृष्टया निर्णय देने से बचना चाहिए जहां सभी तथ्य अधूरे और अस्पष्ट हों; और भी अधिक, जब साक्ष्य एकत्र नहीं किए गए हों और न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किए गए हों और इसमें शामिल मुद्दे, चाहे तथ्यात्मक हों या कानूनी, इतने बड़े हों कि उन्हें पर्याप्त सामग्री के बिना उनके वास्तविक परिप्रेक्ष्य में नहीं देखा जा सकता। ऐसे मामलों के संबंध में कोई कठोर नियम नहीं बनाया जा सकता है जिनमें उच्च न्यायालय किसी भी स्तर पर कार्यवाही को रद्द करने के अपने असाधारण अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करेगा। [पैरा 17] [1179-सी-ई]

आर.पी. कपूर बनाम पंजाब राज्य एआईआर 1960 एससी 866; कर्नाटक राज्य बनाम एल. मुनिस्वामी एवं अन्य (1977) 2 एससीसी 699; मधु लिमये बनाम महाराष्ट्र राज्य (1977) 4 एससीसी 551; माधवराव जीवाजीराव सिंधिया एवं अन्य बनाम संभाजीराव चंद्रोजीराव आंग्रे एवं अन्य (1988) 1 एससीसी 692; हरियाणा राज्य एवं अन्य बनाम भजनलाल एवं अन्य 1992 सप. (1) एससीसी

335; जी. सागर सूरी एवं अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य (2000) 2 एससीसी 636; इंडू फार्मास्यूटिकल वर्क्स लिमिटेड एवं अन्य बनाम मोहम्मद शराफुल हक एवं अन्य (2005) 1 एससीसी 122; मोहन गोस्वामी एवं अन्य बनाम उत्तरांचल राज्य एवं अन्य (2007) 12 एससीसी 1 - संदर्भित।

कॉनेली बनाम लोक अभियोजन निदेशक (1964) एसी 1254; लोक अभियोजन निदेशक बनाम हम्फ्रीज़ (1977) एसी 1 - संदर्भित।

1.3. शिकायतकर्ता के कथनों और शिकायत दर्ज करने के समय दर्ज किए गए सभी गवाहों के बयानों पर ध्यानपूर्वक विचार करने पर, शिकायत में अपीलकर्ताओं के खिलाफ कोई विशेष आरोप नहीं पाए गए और किसी भी गवाह ने दोनों अपीलकर्ताओं की कोई भूमिका नहीं बताई। अपीलकर्ता संख्या 1 स्थान 'एस' की स्थायी निवासी है और अपने पति के साथ सात साल से अधिक समय से रह रही थी। इसी तरह, अपीलकर्ता संख्या 2 स्थान 'जी' की स्थायी निवासी है। वे कभी भी उस स्थान पर नहीं गए जहाँ कथित घटना हुई थी। वे कभी भी प्रतिवादी संख्या 2 और उसके पति के साथ नहीं रहे। शिकायत में उनका आरोप पति के रिश्तेदारों को परेशान करने और अपमानित करने के लिए था। अपीलकर्ताओं के खिलाफ उक्त शिकायत दर्ज करने का यही एकमात्र आधार प्रतीत होता है। शिकायतकर्ता को उक्त शिकायत को आगे बढ़ाने की अनुमति देना कानून की प्रक्रिया का दुरुपयोग होगा। जब मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर कानूनी सिद्धांतों के आधार पर विचार किया जाता है, तो अपीलकर्ताओं को आपराधिक मुकदमे की जटिल प्रक्रिया से गुजरने के लिए मजबूर करना अनुचित होगा। न्याय के हित में अपीलकर्ताओं के खिलाफ शिकायत को रद्द करना उचित है। उच्च न्यायालय के विवादित निर्णय को रद्द किया जाता है। [पैरा 26, 27 और 36] [1184-ई-एच; 1185-ए; 1188-ए-बी]

2.1 यह सर्वविदित है कि दुर्भाग्यवश भारत में वैवाहिक मुकदमेबाजी तेजी से बढ़ रही है। इस न्यायालय सहित देश की सभी अदालतें वैवाहिक मामलों से भरी पड़ी हैं। यह स्पष्ट रूप से समाज के बहुत से लोगों के पारिवारिक जीवन में असंतोष और अशांति को दर्शाता है। यह सर्वविदित है कि धारा 498-ए आईपीसी के अंतर्गत अधिकांश शिकायतें बिना उचित विचार-विमर्श के क्षणिक मुद्दों पर आवेश में आकर दायर की जाती हैं। ऐसी शिकायतों की संख्या बहुत अधिक है जो वास्तविक भी नहीं होती हैं और परोक्ष उद्देश्य से दायर की जाती हैं। साथ ही दहेज उत्पीड़न के वास्तविक मामलों की संख्या में तेजी से वृद्धि भी गंभीर चिंता का विषय है। [पैरा 28 और 30] [1185-बी-एच; 1186-ए-बी]

2.2 न्याय का अंतिम उद्देश्य सत्य का पता लगाना, दोषियों को दंडित करना तथा निर्दोषों की रक्षा करना है। अधिकांश शिकायतों में सत्य का पता लगाना बहुत कठिन कार्य है। पति तथा उसके सभी निकट संबंधियों को फंसाने की प्रवृत्ति भी असामान्य नहीं है। कई बार तो आपराधिक मुकदमे के समाप्त होने के बाद भी सत्य का पता लगाना कठिन होता है। न्यायालयों को इन शिकायतों से निपटने में अत्यंत सावधान तथा सतर्क रहना चाहिए तथा वैवाहिक मामलों से निपटने में व्यावहारिक वास्तविकताओं को ध्यान में रखना चाहिए। पति के निकट संबंधियों, जो अलग-अलग शहरों में रह रहे थे तथा कभी शिकायतकर्ता के निवास स्थान पर नहीं गए अथवा बहुत कम गए, के उत्पीड़न के आरोपों का स्वरूप बिल्कुल अलग होगा। शिकायत के आरोपों की बहुत सावधानी तथा सावधानी से जांच की जानी चाहिए। अनुभव से पता चलता है कि लंबे तथा लंबे समय तक चलने वाले आपराधिक मुकदमे पक्षकारों के बीच संबंधों में विद्वेष, कटुता तथा कटुता पैदा करते हैं। यह भी सर्वविदित है कि शिकायतकर्ता द्वारा दायर मामलों में यदि पति या पति के रिश्तेदारों को कुछ दिन भी जेल में रहना पड़े तो इससे सौहार्दपूर्ण समाधान की संभावना पूरी तरह खत्म हो जाएगी। पीड़ा की प्रक्रिया बहुत लंबी और दर्दनाक होती है। [पैरा 33] [1186-जी-एच; 1187-ए-सी]

2.3 कानून द्वारा पूरे प्रावधान पर गंभीरता से पुनर्विचार करने की आवश्यकता है। यह भी सर्वविदित है कि बहुत सी शिकायतों में घटना के बारे में बढ़ा-चढ़ाकर बताया जाता है। बहुत से मामलों में अतिशयोक्ति की प्रवृत्ति भी दिखाई देती है। (पैरा 34] [1187-डी]

2.4 आपराधिक मुकदमों से सभी संबंधित लोगों को बहुत कष्ट उठाना पड़ता है। मुकदमे में अंतिम रूप से बरी होने पर भी अपमान की पीड़ा के गहरे जख्मों को मिटाना संभव नहीं है। दुर्भाग्य से, इन शिकायतों की एक बड़ी संख्या ने न केवल अदालतों में बाढ़ ला दी है, बल्कि समाज की शांति, सद्भाव और खुशी को प्रभावित करने वाली भारी सामाजिक अशांति को भी जन्म दिया है। अब समय आ गया है कि विधायिका को व्यावहारिक वास्तविकताओं को ध्यान में रखना चाहिए और मौजूदा कानून में उपयुक्त बदलाव करने चाहिए। विधायिका के लिए यह अनिवार्य है कि वह सूचित जनमत और व्यावहारिक वास्तविकताओं को ध्यान में रखे और कानून के प्रासंगिक प्रावधानों में आवश्यक बदलाव करे। रजिस्ट्री को निर्देश दिया जाता है कि वह निर्णय की एक प्रति विधि आयोग और भारत सरकार के केंद्रीय विधि सचिव को भेजे, जो इसे माननीय विधि और न्याय मंत्री के समक्ष रख सकते हैं ताकि समाज के व्यापक हित में उचित कदम उठाए जा सकें [पैरा 35] [1187-ई-एच]

3. बार के विद्वान सदस्यों का यह बहुत बड़ा सामाजिक उत्तरदायित्व और दायित्व है कि वे सुनिश्चित करें कि पारिवारिक जीवन का सामाजिक ताना-बाना बर्बाद या नष्ट न हो। उन्हें यह सुनिश्चित करना चाहिए कि आपराधिक शिकायतों में छोटी-छोटी घटनाओं का बढ़ा-चढ़ाकर वर्णन न किया जाए। अधिकांश शिकायतें या तो उनकी सलाह पर या उनकी सहमति से दर्ज की जाती हैं। बार के विद्वान सदस्य जो किसी महान पेशे से जुड़े हैं, उन्हें इसकी महान परंपराओं को बनाए रखना चाहिए और धारा 498-ए के तहत हर शिकायत को एक बुनियादी मानवीय समस्या के रूप में देखना चाहिए और उस मानवीय समस्या के सौहार्दपूर्ण समाधान पर पहुंचने में पक्षों की मदद करने के लिए गंभीर प्रयास करना चाहिए। उन्हें यह सुनिश्चित करने के लिए अपनी पूरी क्षमता से अपने कर्तव्यों का निर्वहन करना चाहिए कि समाज का सामाजिक ताना-बाना, शांति और सौहार्द बरकरार रहे। बार के सदस्यों को यह भी सुनिश्चित करना चाहिए कि एक शिकायत के कारण कई मामले न हों। [पैरा 31] [1186-सी-ई]

केस कानून संदर्भ:

(1964) एसी 1254	संदर्भित।	पैरा 16
(1977) एसी 1	का उल्लेख है।	पैरा 16
एआईआर 1960 एससी 866	का संदर्भ दिया गया।	पैरा 18.
(1977) 2 सेकंड 699	संदर्भित।	पैरा 19
(1977) 4 सेकंड 551	संदर्भित।	पैरा 20
(1988) 1 सेकंड 692	संदर्भित।	पैरा 21
1992 सप्प. (1) धारा 335	का उल्लेख है।	पैरा 22
(2000) 2 सेकंड 636	संदर्भित।	पैरा 23
(2005) 1 सेकंड 122	संदर्भित।	पैरा 24

आपराधिक अपीलीय क्षेत्राधिकार: आपराधिक अपील संख्या 1512/2010

झारखंड उच्च न्यायालय रांची के दिनांक 27.04.2009 के आपराधिक अपीलीय एम.पी. संख्या 304/2009 के निर्णय एवं आदेश से।

अपीलकर्ताओं की ओर से अरविंद कुमार, लक्ष्मी अरविंद, पूनम प्रसाद, अनुज कुमार। प्रतिवादियों की ओर से नागेंद्र राय, एजाज मकबूल, फराज खान, साक्षी बंगा, गरिमा कपूर, गोपाल प्रसाद।

न्यायालय का निर्णय

न्यायमूर्ति **दलवीर भंडारी** द्वारा सुनाया गया। 1. अनुमति प्रदान की गई।

2. यह अपील प्रीति गुप्ता, जो विवाहित भाभी हैं और नवसारी, सूरत, गुजरात की स्थायी निवासी हैं, उनके पति और गौरव पोद्दार, गोरेगांव, महाराष्ट्र के स्थायी निवासी हैं, जो शिकायतकर्ता मनीषा पोद्दार के अविवाहित देवर हैं, ने आपराधिक विविध याचिका संख्या 304/2009 में झारखंड उच्च न्यायालय, रांची, झारखंड द्वारा दिनांक 27.4.2009 को पारित किए गए विवादित निर्णय के विरुद्ध दायर की है।

3. इस अपील के निपटारे के लिए आवश्यक संक्षिप्त तथ्य निम्नानुसार हैं:

शिकायतकर्ता मनीषा की शादी 10.12.2006 को कानपुर में कमल पोद्दार से हुई थी। शादी के तुरंत बाद, शिकायतकर्ता जो इस अपील में प्रतिवादी संख्या 2 है, अपने पति कमल पोद्दार के साथ मुंबई चली गई, जो टाटा कंसल्टेंसी सर्विसेज (संक्षेप में "टीसीएस") में काम कर रहे थे और स्थायी रूप से मुंबई में रह रहे थे। शिकायतकर्ता ने 23.12.2006 को मुंबई में टीसीएस जॉइन भी कर लिया। प्रतिवादी संख्या 2 16.3.2007 को "गणगौर" उत्सव (उत्तरी भारत में व्यापक रूप से मनाया जाने वाला एक महत्वपूर्ण हिंदू त्योहार) में भाग लेने के लिए रांची गई थी। वहाँ एक सप्ताह रहने के बाद, वह 24.03.2007 को मुंबई लौट आई।

4. प्रतिवादी संख्या 2 मनीषा पोद्दार ने 08.07.2007 को मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, रांची के समक्ष भारतीय दंड संहिता की धारा 498-ए, 406, 341, 323 और 120-बी के साथ दहेज निषेध अधिनियम की धारा 3 और 4 के तहत अपने पति के सभी करीबी रिश्तेदारों, अर्थात् प्यारेलाल पोद्दार (ससुर), कमल पोद्दार (पति), सुशीला देवी (सास), गौरव पोद्दार (अविवाहित देवर) और प्रीति गुप्ता उर्फ प्रीति अग्रवाल (विवाहित ननद) के खिलाफ शिकायत दर्ज कराई। शिकायत को न्यायिक मजिस्ट्रेट, रांची की अदालत में स्थानांतरित कर दिया गया। प्रतिवादी संख्या 2 और अन्य गवाहों के बयान दर्ज किए गए और 10.10.2008 को न्यायिक मजिस्ट्रेट ने संज्ञान लिया और अपीलकर्ताओं को तलब करने का आदेश पारित किया। अपीलकर्ता उक्त समन आदेश से व्यथित हैं।

5. आपराधिक शिकायत में आरोप लगाया गया था कि शिकायत में नामित सभी आरोपियों द्वारा एक लज्जरी कार की मांग की गई थी। यह भी आरोप लगाया गया था कि प्रतिवादी संख्या 2 पर मुंबई में शारीरिक हमला किया गया था। शिकायतकर्ता के उक्त आरोपों के अनुसार, ऐसा प्रतीत होता है कि कथित घटनाएं कानपुर या मुंबई में हुई थीं।

शिकायत के कथनों के अनुसार, लग्जरी कार की मांग को छोड़कर रांची में उत्पीड़न की कोई घटना नहीं हुई।

6. अपीलकर्ताओं के अनुसार, शिकायत में दोनों अपीलकर्ताओं के खिलाफ कोई विशेष आरोप नहीं था। अपीलकर्ता संख्या 1 पिछले सात वर्षों से अधिक समय से अपने पति के साथ नवसारी, सूरत (गुजरात) में स्थायी रूप से रह रही थी। वह वर्ष 2007 के दौरान कभी मुंबई नहीं गई और प्रतिवादी संख्या 2 या उसके पति के साथ कभी नहीं रही। इसी तरह, अपीलकर्ता संख्या 2, शिकायतकर्ता का अविवाहित देवर भी गोरेगांव, महाराष्ट्र में स्थायी रूप से रह रहा है।

7. यह दावा किया गया कि दोनों अपीलकर्ताओं के खिलाफ पूरी शिकायत में कोई विशेष आरोप नहीं है। शिकायतकर्ता के बयान के साथ अभियोजन पक्ष के गवाह पीडब्लू 1 से पीडब्लू 4 के बयान भी दर्ज किए गए। अभियोजन पक्ष के किसी भी गवाह ने अपीलकर्ताओं के खिलाफ कुछ नहीं कहा। इन अपीलकर्ताओं ने इस अपील में बहुत स्पष्ट रूप से कहा था कि वे कभी रांची नहीं गए। अपीलकर्ताओं ने यह भी कहा कि उन्होंने शिकायतकर्ता और उसके पति के आंतरिक मामलों में कभी हस्तक्षेप नहीं किया। उनके अनुसार, किसी भी हस्तक्षेप का कोई सवाल ही नहीं था क्योंकि अपीलकर्ता कई वर्षों से अलग-अलग शहरों में रह रहे थे।

8. अपीलकर्ताओं ने स्पष्ट रूप से आरोप लगाया कि उन्हें इस मामले में झूठा फंसाया गया है। आगे कहा गया कि अपीलकर्ताओं के खिलाफ शिकायत पूरी तरह से बिना किसी आधार या आधार के थी। अपीलकर्ताओं ने यह भी दावा किया कि भले ही शिकायत में शामिल सभी आरोपों को सच मान लिया जाए, तब भी उनके खिलाफ कोई अपराध नहीं बनाया जा सकता।

9. अपीलकर्ताओं ने दलील दी थी कि जहां तक दोनों अपीलकर्ताओं का सवाल है, उच्च न्यायालय को इस शिकायत को खारिज कर देना चाहिए था क्योंकि अपीलकर्ताओं के खिलाफ कोई विशेष आरोप नहीं थे और उन्हें तलब नहीं किया जाना चाहिए था। विवादित फैसले में, अपनी अंतर्निहित शक्तियों का प्रयोग करने से इनकार करते हुए, उच्च न्यायालय ने निम्नलिखित टिप्पणी की:

"इस संदर्भ में, मैं फिर से दोहरा सकता हूं कि शिकायत याचिका के अनुसार मांग या क्रूरता से संबंधित कृत्य उस स्थान पर किए गए हैं जहां शिकायतकर्ता अपने पति के साथ रह रही थी। हालांकि, शिकायतकर्ता ने अपने बयान में कहा है कि जब वह होली के अवसर पर रांची आई थी, तो सभी आरोपी व्यक्ति आए और व्यंग्यात्मक टिप्पणियां कीं, जो वास्तविक शब्दों के अभाव में, याचिकाकर्ता के लिए उपस्थित विद्वान वकील के अनुसार भारतीय दंड संहिता की धारा 498 ए के तहत अपराध का गठन करने वाला कार्य नहीं माना जा सकता है।"

10. इस अपील में, दोनों अपीलकर्ताओं ने विशेष रूप से दावा किया कि वे कभी रांची नहीं गए, इसलिए, जहां तक अपीलकर्ताओं का संबंध है, उनके द्वारा शिकायतकर्ता पर कोई व्यंग्यात्मक टिप्पणी करने के आरोपों का कोई आधार या आधार नहीं है।

11. शिकायतकर्ता इस बात पर विवाद नहीं कर सका कि अपीलकर्ता संख्या 1 पिछले सात वर्षों से अधिक समय से नवसारी, सूरत, गुजरात में अपने पति के साथ रह रही एक स्थायी निवासी थी और

अपीलकर्ता संख्या 2 गोरगांव, महाराष्ट्र की स्थायी निवासी थी। उन्होंने प्रतिवादी संख्या 2 के साथ कभी कोई समय नहीं बिताया।

12. अपीलकर्ताओं के अनुसार, वे रांची के निवासी नहीं हैं और यदि उन्हें बार-बार रांची कोर्ट में उपस्थित होने के लिए मजबूर किया जाता है, तो इससे अपीलकर्ताओं के साथ-साथ शिकायतकर्ता को भी असहनीय उत्पीड़न और असुविधा होगी।

13. इस मामले में धारा 498-ए आईपीसी के तहत शिकायत ने कई अन्य मामलों को जन्म दिया है। यह उल्लेख किया गया है कि प्रतिवादी संख्या 2 के पति द्वारा तलाक की याचिका दायर की गई है। प्रतिवादी संख्या 2 और उसके पति दोनों ही उच्च शिक्षित हैं और टाटा कंसल्टेंसी सर्विस जैसी प्रतिष्ठित संस्था में काम कर रहे हैं। यदि स्वभावगत असंगति के कारण वे एक दूसरे के साथ नहीं रह सकते हैं तो उचित है कि वे आपसी सहमति से तलाक का आदेश प्राप्त कर लें। प्रतिवादी संख्या 2 और उसके पति दोनों ही ऐसे आयु वर्ग में हैं कि यदि उचित प्रयास किए जाएं तो उनका पुनर्वास असंभव नहीं हो सकता।

14. इस मामले में विचारणीय मुख्य प्रश्न यह है कि क्या उच्च न्यायालय द्वारा इस मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अंतर्गत अपनी अंतर्निहित शक्तियों का प्रयोग न करना न्यायोचित था?

15. इस न्यायालय ने अनेक मामलों में धारा 482 सीआरपीसी के अंतर्गत न्यायालयों की शक्तियों का दायरा और दायरा निर्धारित किया है। प्रत्येक उच्च न्यायालय के पास वास्तविक और सारवान न्याय करने के लिए, जिसके प्रशासन के लिए ही वह अस्तित्व में है, या न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने के लिए, एक्स डेबिटो जस्टिटिया कार्य करने की अंतर्निहित शक्ति है। धारा 482 सीआरपीसी के अंतर्गत अंतर्निहित शक्ति का प्रयोग किया जा सकता है:

(i) संहिता के अंतर्गत किसी आदेश को प्रभावी करने के लिए;

(ii) न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने के लिए, और

(iii) अन्यथा न्याय के उद्देश्यों को सुरक्षित करने के लिए।

16. निम्नलिखित मामलों के संदर्भ से पता चलता है कि न्यायालयों ने हमेशा यह दृष्टिकोण अपनाया है कि उन्हें अन्याय को रोकने और न्याय के उद्देश्यों को सुरक्षित करने के लिए इस असाधारण शक्ति का उपयोग करना चाहिए। अंग्रेजी न्यायालयों ने भी इसी उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए अंतर्निहित शक्ति का उपयोग किया है। यह आम तौर पर स्वीकार किया जाता है कि क्राउन कोर्ट के पास अपनी प्रक्रिया को दुरुपयोग से बचाने के लिए अंतर्निहित शक्ति है। कॉनेली बनाम डायरेक्टर ऑफ पब्लिक प्रॉसिक्यूशन [1964] एसी 1254 में, लॉर्ड डेवलिन ने कहा कि जहां विशेष आपराधिक कार्यवाही प्रक्रिया का दुरुपयोग करती है, वहां न्यायालय को अभियोग को सुनवाई के लिए आगे बढ़ने की अनुमति देने से इनकार करने का अधिकार है। डायरेक्ट ऑफ पब्लिक प्रॉसिक्यूशन बनाम हम्फ्रीज़ [1977] एसी 1 में लॉर्ड सैल्मन ने अंतर्निहित शक्ति के महत्व पर जोर दिया

जब उन्होंने देखा कि यह केवल तभी है जब अभियोजन पक्ष न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग करता है और दमनकारी और परेशान करने वाला है, तब न्यायाधीश को हस्तक्षेप करने की शक्ति है। उन्होंने आगे उल्लेख किया कि इस तरह के दुरुपयोग को रोकने के लिए न्यायालय की शक्ति बहुत संवैधानिक महत्व की है और इसे पूरी लगन से संरक्षित किया जाना चाहिए।

17. संहिता की धारा 482 के अन्तर्गत उच्च न्यायालय के पास जो शक्तियाँ हैं, वे बहुत व्यापक हैं तथा शक्ति की प्रचुरता के कारण इसके प्रयोग में बहुत सावधानी की आवश्यकता है। न्यायालय को इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि इस शक्ति के प्रयोग में उसका निर्णय ठोस सिद्धांतों पर आधारित हो। निहित शक्ति का प्रयोग वैध अभियोजन को रोकने के लिए नहीं किया जाना चाहिए, लेकिन न्याय को आगे बढ़ाने के लिए शक्ति का प्रयोग करने में न्यायालय की विफलता भी घोर अन्याय का कारण बन सकती है। उच्च न्यायालय को सामान्यतः ऐसे मामले में प्रथम दृष्टया निर्णय देने से बचना चाहिए, जहाँ सभी तथ्य अपूर्ण तथा अस्पष्ट हों; और भी अधिक, जब साक्ष्य एकत्रित न किए गए हों तथा न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत न किए गए हों तथा इसमें शामिल मुद्दे, चाहे तथ्यात्मक हों या कानूनी, इतने बड़े हों कि उन्हें पर्याप्त सामग्री के बिना उनके वास्तविक परिप्रेक्ष्य में नहीं देखा जा सकता। बेशक, ऐसे मामलों के संबंध में कोई कठोर नियम नहीं बनाया जा सकता, जिनमें उच्च न्यायालय किसी भी स्तर पर कार्यवाही को रद्द करने के अपने असाधारण अधिकार का प्रयोग करेगा।

18. इस न्यायालय को बहुत से मामलों में कानूनी स्थिति की जांच करने का अवसर मिला। आर.पी. कपूर बनाम पंजाब राज्य एआईआर 1960 एससी 866 में, इस न्यायालय ने कुछ श्रेणियों के मामलों का सारांश दिया, जहां कार्यवाही को रद्द करने के लिए अंतर्निहित शक्ति का प्रयोग किया जा सकता है और किया जाना चाहिए:

(i) जहां यह स्पष्ट रूप से प्रतीत होता है कि कार्यवाही शुरू करने या जारी रखने के खिलाफ कानूनी प्रतिबंध है;

(ii) जहां प्रथम सूचना रिपोर्ट या शिकायत में आरोपों को उनके अंकित मूल्य पर लिया जाए और उनकी संपूर्णता में स्वीकार किया जाए, तो आरोपित अपराध नहीं बनता है;

(iii) जहां आरोप अपराध बनाते हैं, लेकिन कोई कानूनी सबूत पेश नहीं किया गया है या पेश किए गए सबूत स्पष्ट रूप से या स्पष्ट रूप से आरोप को साबित करने में विफल रहे हैं।

19. इस न्यायालय ने कर्नाटक राज्य बनाम एल. मुनिस्वामी एवं अन्य (1977) 2 एससीसी 699 में यह पाया कि धारा 482 सीआरपीसी के तहत पूर्ण शक्ति उच्च न्यायालय को कार्यवाही को रद्द करने का अधिकार देती है, जब वह इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि कार्यवाही को जारी रखने की अनुमति देना न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग होगा या न्याय के उद्देश्यों के लिए कार्यवाही को रद्द किया जाना चाहिए। उच्च न्यायालयों को नागरिक और आपराधिक दोनों मामलों में निहित शक्तियाँ दी गई हैं, ताकि एक हितकारी सार्वजनिक उद्देश्य प्राप्त किया जा सके। न्यायालय की कार्यवाही को उत्पीड़न या उत्पीड़न के हथियार में बदलने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए। इस मामले में, न्यायालय ने

पाया कि न्याय के उद्देश्य केवल कानून के उद्देश्यों से अधिक हैं, हालांकि न्याय को विधायिका द्वारा बनाए गए कानूनों के अनुसार प्रशासित किया जाना चाहिए। इस मामले का इस न्यायालय और अन्य न्यायालयों के बाद के कई मामलों में अनुसरण किया गया है।

20. मधु लिमये बनाम महाराष्ट्र राज्य (1977) 4 धारा 551 में, इस न्यायालय की तीन न्यायाधीशों की पीठ ने निम्न प्रकार से निर्णय दिया:-

"..... यदि आरोपित आदेश स्पष्ट रूप से ऐसी स्थिति को सामने लाता है जो न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग है, या न्याय के उद्देश्यों को सुरक्षित करने के उद्देश्य से उच्च न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप करना अत्यंत आवश्यक है; तो धारा 397(2) में निहित कोई भी बात उच्च न्यायालय द्वारा निहित शक्ति के प्रयोग को सीमित या प्रभावित नहीं करती है। ऐसे मामले अनिवार्य रूप से बहुत कम और विरल होंगे। ऐसा ही एक मामला अवैध रूप से, तंग करने वाले तरीके से या अधिकार क्षेत्र के बिना शुरू की गई आपराधिक कार्यवाही को रद्द करने की वांछनीयता होगी। वर्तमान मामला निस्संदेह 1973 संहिता की धारा 482 के अनुसार उच्च न्यायालय की शक्ति के प्रयोग के अंतर्गत आएगा, भले ही यह मान लिया जाए कि उच्च न्यायालय की पुनरीक्षण शक्ति का आह्वान करना अनुचित है।"

21. इस न्यायालय ने माधवराव जीवाजीराव सिंधिया एवं अन्य बनाम संभाजीराव चंद्रोजीराव आंग्रे एवं अन्य (1988) 1 एससीसी 692 में पैरा 7 में निम्न प्रकार से टिप्पणी की:

"7. विधिक स्थिति यह है कि जब किसी अभियोजन को आरंभिक चरण में निरस्त करने के लिए कहा जाता है, तो न्यायालय द्वारा लागू किया जाने वाला परीक्षण यह होता है कि क्या लगाए गए निर्विवाद आरोप प्रथम दृष्टया अपराध को स्थापित करते हैं। न्यायालय को किसी विशेष मामले में दिखाई देने वाली किसी विशेष विशेषता को ध्यान में रखना भी आवश्यक है, ताकि यह विचार किया जा सके कि अभियोजन को जारी रखने की अनुमति देना समीचीन है या न्याय के हित में। ऐसा इसलिए है क्योंकि न्यायालय का उपयोग किसी अप्रत्यक्ष उद्देश्य के लिए नहीं किया जा सकता है और जहां न्यायालय की राय में अंतिम दोषसिद्धि की संभावना धूमिल है और इसलिए, आपराधिक अभियोजन को जारी रखने की अनुमति देने से कोई उपयोगी उद्देश्य पूरा होने की संभावना नहीं है, न्यायालय मामले के विशेष तथ्यों को ध्यान में रखते हुए कार्यवाही को निरस्त भी कर सकता है, भले ही ऐसा करना उचित हो। प्रारंभिक चरण में हो।"

22. हरियाणा राज्य एवं अन्य बनाम भजन लाल एवं अन्य 1992 अनुपूरक (1) एससीसी 335 में, इस न्यायालय ने अध्याय x iv के अंतर्गत दंड प्रक्रिया संहिता (संक्षेप में सीआरपीसी) के विभिन्न प्रासंगिक प्रावधानों की व्याख्या और भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अंतर्गत असाधारण शक्ति या सीआरपीसी की धारा 482 के अंतर्गत अंतर्निहित शक्तियों के प्रयोग से संबंधित निर्णयों की श्रृंखला में इस न्यायालय द्वारा प्रतिपादित विधि के सिद्धांतों की पृष्ठभूमि में, उदाहरण के तौर पर मामलों की निम्नलिखित श्रेणियां दीं, जिनमें ऐसी शक्ति का प्रयोग न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने के लिए या अन्यथा न्याय के उद्देश्यों को सुरक्षित करने के लिए किया जा सकता है। इस

प्रकार, इस न्यायालय ने यह स्पष्ट कर दिया कि कोई सटीक, स्पष्ट रूप से परिभाषित और पर्याप्त रूप से चैनलाइज्ड और अनम्य दिशानिर्देश या कठोर सूत्र निर्धारित करना और असंख्य प्रकार के मामलों की एक विस्तृत सूची देना संभव नहीं हो सकता है, जिनमें ऐसी शक्ति का प्रयोग किया जाना चाहिए:

- "(1) जहां प्रथम सूचना रिपोर्ट या शिकायत में लगाए गए आरोप, भले ही उन्हें उनके अंकित मूल्य पर लिया जाए और उनकी संपूर्णता में स्वीकार किया जाए, प्रथम दृष्टया कोई अपराध नहीं बनाते हैं या आरोपी के खिलाफ कोई मामला नहीं बनाते हैं।
- (2) जहां प्रथम सूचना रिपोर्ट और एफआईआर के साथ दी गई अन्य सामग्री, यदि कोई हो, में लगाए गए आरोप किसी संज्ञेय अपराध का खुलासा नहीं करते हैं, तो कोड की धारा 155(2) के दायरे में मजिस्ट्रेट के आदेश के अलावा कोड की धारा 156(1) के तहत पुलिस अधिकारियों द्वारा जांच को उचित ठहराया जा सकता है।
- (3) जहां एफआईआर या शिकायत में लगाए गए निर्विवाद आरोप और उनके समर्थन में एकत्र किए गए साक्ष्य किसी अपराध के किए जाने का खुलासा नहीं करते हैं और आरोपी के खिलाफ कोई मामला नहीं बनाते हैं।
- (4) जहां एफआईआर में लगाए गए आरोप संज्ञेय अपराध नहीं बनाते हैं, बल्कि केवल असंज्ञेय अपराध बनाते हैं, पुलिस द्वारा जांच की अनुमति नहीं है। धारा 155(2) के अन्तर्गत मजिस्ट्रेट के आदेश के बिना अधिकारी द्वारा कार्यवाही नहीं की जा सकती।
- (5) जहां एफआईआर या शिकायत में लगाए गए आरोप इतने बेतुके और स्वाभाविक रूप से असंभव हैं कि उनके आधार पर कोई भी विवेकशील व्यक्ति कभी भी इस निष्कर्ष पर नहीं पहुंच सकता कि अभियुक्त के विरुद्ध कार्यवाही करने के लिए पर्याप्त आधार है।
- (6) जहां संहिता या संबंधित अधिनियम (जिसके अन्तर्गत आपराधिक कार्यवाही संस्थित की जाती है) के किसी भी प्रावधान में कार्यवाही संस्थित करने और जारी रखने पर स्पष्ट कानूनी रोक लगाई गई है और/या जहां संहिता या संबंधित अधिनियम में कोई विशिष्ट प्रावधान है, जो पीड़ित पक्ष की शिकायत के लिए प्रभावी निवारण प्रदान करता है।
- (7) जहां आपराधिक कार्यवाही में स्पष्ट रूप से जानबूझकर भाग लिया जाता है और/या जहां कार्यवाही दुर्भावनापूर्ण तरीके से अभियुक्त पर बदला लेने के लिए और निजी और व्यक्तिगत द्वेष के कारण उसे परेशान करने के उद्देश्य से शुरू की जाती है।"

23. जी सागर सूरी एवं अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य (2000) 2 एससीसी 636 में, इस न्यायालय ने कहा कि आपराधिक न्यायालय का यह कर्तव्य और दायित्व है कि वह प्रक्रिया जारी करने में बहुत सावधानी बरतें, खासकर तब जब मामला अनिवार्य रूप से सिविल प्रकृति का हो।

24. इस न्यायालय ने झंडू फार्मास्युटिकल वर्क्स लिमिटेड एवं अन्य बनाम मोहम्मद शराफू/हक एवं अन्य (2005) 1 एससीसी 122 ने इस प्रकार टिप्पणी की:-

"किसी भी ऐसी कार्रवाई की अनुमति देना न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग होगा, जिसके परिणामस्वरूप अन्याय होगा और न्याय को बढ़ावा देने में बाधा होगी। शक्तियों के प्रयोग में, न्यायालय किसी भी कार्यवाही को रद्द करने के लिए न्यायोचित होगा, यदि उसे लगता है कि इसे शुरू करना/जारी रखना न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग है या इन कार्यवाहियों को रद्द करना अन्यथा न्याय के उद्देश्यों की पूर्ति नहीं करेगा। जब शिकायत से कोई अपराध प्रकट नहीं होता है, तो न्यायालय तथ्य के प्रश्न की जांच कर सकता है। जब किसी शिकायत को रद्द करने की मांग की जाती है, तो शिकायतकर्ता ने क्या आरोप लगाया है और क्या कोई अपराध बनता है, इसका आकलन करने के लिए सामग्री को देखने की अनुमति है, भले ही आरोपों को पूरी तरह से स्वीकार कर लिया जाए।"

25. मोहन गोस्वामी एवं अन्य बनाम उत्तराखण्ड राज्य/ एवं अन्य (2007)/ 12 धारा 1 के मामले में इस न्यायालय की तीन न्यायाधीशों की पीठ (जिनमें से एक न्यायमूर्ति भंडारी भी थे) ने विधिक स्थिति की व्यापक जांच की। न्यायालय एक निश्चित निष्कर्ष पर पहुंचा और न्यायालय की प्रासंगिक टिप्पणियों को उक्त निर्णय के पैरा 24 में इस प्रकार से पुनः प्रस्तुत किया गया है:-

"धारा 482 सीआरपीसी के तहत निहित शक्तियों का प्रयोग यद्यपि व्यापक है, लेकिन उनका प्रयोग सावधानी से, सावधानी से और बहुत सावधानी से किया जाना चाहिए और केवल तभी किया जाना चाहिए जब ऐसा प्रयोग इस धारा में विशेष रूप से निर्धारित परीक्षणों द्वारा उचित ठहराया गया हो। न्यायालय का अधिकार न्याय की उन्नति के लिए है। यदि अन्याय की ओर ले जाने वाली प्रक्रिया का कोई दुरुपयोग न्यायालय के ध्यान में लाया जाता है, तो न्यायालय को कानून में विशिष्ट प्रावधानों की अनुपस्थिति में निहित शक्तियों का आह्वान करके अन्याय को रोकने में न्यायोचित ठहराया जाएगा।"

26. हमने शिकायत के कथनों और शिकायत दर्ज करने के समय दर्ज किए गए सभी गवाहों के बयानों पर बहुत सावधानी से विचार किया है। शिकायत में अपीलकर्ताओं के खिलाफ कोई विशेष आरोप नहीं हैं और किसी भी गवाह ने दोनों अपीलकर्ताओं की किसी भूमिका का आरोप नहीं लगाया है।

27. बेशक, अपीलकर्ता संख्या 1 नवसारी, सूरत, गुजरात की स्थायी निवासी है और सात साल से अधिक समय से अपने पति के साथ रह रही है। इसी तरह, अपीलकर्ता संख्या 2 गोरगांव, महाराष्ट्र की स्थायी निवासी है। वे कभी भी उस स्थान पर नहीं गए जहाँ कथित घटना हुई थी। वे कभी भी प्रतिवादी संख्या 2 और उसके पति के साथ नहीं रहे। शिकायत में उनका आरोप पति के रिश्तेदारों को परेशान करने और अपमानित करने के लिए है। अपीलकर्ताओं के खिलाफ यह शिकायत दर्ज करने का यही एकमात्र आधार प्रतीत होता है। शिकायतकर्ता को इस शिकायत को आगे बढ़ाने की अनुमति देना कानून की प्रक्रिया का दुरुपयोग होगा।

28. यह सर्वविदित है कि दुर्भाग्य से हमारे देश में वैवाहिक मुकदमेबाजी तेजी से बढ़ रही है। इस न्यायालय सहित हमारे देश की सभी अदालतें वैवाहिक मामलों से भरी पड़ी हैं। यह स्पष्ट रूप से समाज के बहुत से लोगों के पारिवारिक जीवन में असंतोष और अशांति को दर्शाता है। 29. न्यायालयों में भारतीय दंड संहिता की धारा 498-ए से संबंधित बहुत से मामले आ रहे हैं, जो इस प्रकार हैं:-

"498-ए. किसी महिला के पति या पति के रिश्तेदार द्वारा उसके साथ क्रूरता करना।- जो कोई, किसी महिला का पति या पति का रिश्तेदार होते हुए, ऐसी महिला के साथ क्रूरता करेगा, उसे कारावास से दंडित किया जाएगा, जिसकी अवधि तीन वर्ष तक की हो सकेगी और वह जुर्माने से भी दंडनीय होगा।

स्पष्टीकरण.- इस धारा के प्रयोजनों के लिए, 'क्रूरता' का अर्थ है:-

(क) कोई भी जानबूझकर किया गया आचरण जो ऐसी प्रकृति का हो जिससे महिला को आत्महत्या करने के लिए प्रेरित किया जा सके या महिला के जीवन, अंग या स्वास्थ्य (मानसिक या शारीरिक) को गंभीर चोट या खतरा हो; या

(ख) महिला का उत्पीड़न, जहां ऐसा उत्पीड़न उसे या उसके किसी भी संबंधित व्यक्ति को किसी संपत्ति या मूल्यवान सुरक्षा की किसी भी गैरकानूनी मांग को पूरा करने के लिए मजबूर करने के उद्देश्य से हो या उसके या उसके किसी भी संबंधित व्यक्ति द्वारा ऐसी मांग को पूरा करने में विफलता के कारण हो।"

30. यह आम अनुभव की बात है कि भारतीय दंड संहिता की धारा 498-ए के अंतर्गत अधिकांश शिकायतें बिना उचित विचार-विमर्श के क्षणिक मुद्दों पर आवेश में आकर दायर की जाती हैं। हमें ऐसी बहुत सी शिकायतें देखने को मिलती हैं जो वास्तविक भी नहीं होतीं और परोक्ष उद्देश्य से दायर की जाती हैं। साथ ही दहेज उत्पीड़न के वास्तविक मामलों की संख्या में तेजी से वृद्धि भी गंभीर चिंता का विषय है।

31. बार के विद्वान सदस्यों की बहुत बड़ी सामाजिक जिम्मेदारी और दायित्व है कि वे सुनिश्चित करें कि पारिवारिक जीवन का सामाजिक ताना-बाना बर्बाद या नष्ट न हो। उन्हें यह सुनिश्चित करना चाहिए कि आपराधिक शिकायतों में छोटी-छोटी घटनाओं का बढ़ा-चढ़ाकर वर्णन न किया जाए। अधिकांश शिकायतें या तो उनकी सलाह पर या उनकी सहमति से दायर की जाती हैं। बार के विद्वान सदस्य जो एक महान पेशे से जुड़े हैं, उन्हें इसकी महान परंपराओं को बनाए रखना चाहिए और धारा 498-ए के तहत प्रत्येक शिकायत को एक बुनियादी मानवीय समस्या के रूप में लेना चाहिए और उस मानवीय समस्या के सौहार्दपूर्ण समाधान पर पहुंचने में पक्षों की मदद करने के लिए गंभीर प्रयास करना चाहिए। उन्हें अपनी पूरी क्षमता से अपने कर्तव्यों का निर्वहन करना चाहिए ताकि यह सुनिश्चित हो सके कि समाज का सामाजिक ताना-बाना, शांति और सौहार्द बरकरार रहे। बार के सदस्यों को यह भी सुनिश्चित करना चाहिए कि एक शिकायत के कारण कई मामले न हों।

32. दुर्भाग्य से, शिकायत दर्ज करते समय शिकायतकर्ता द्वारा इसके निहितार्थ और परिणामों की ठीक से कल्पना नहीं की जाती है कि ऐसी शिकायत से शिकायतकर्ता, आरोपी और उसके करीबी रिश्तेदारों को असहनीय उत्पीड़न, पीड़ा और दर्द हो सकता है।

33. न्याय का अंतिम उद्देश्य सत्य का पता लगाना, दोषियों को दण्डित करना तथा निर्दोषों की रक्षा करना है। अधिकांश शिकायतों में सत्य का पता लगाना बहुत कठिन कार्य है। पति तथा उसके सभी निकट सम्बन्धियों को फंसाने की प्रवृत्ति भी असामान्य नहीं है। कई बार तो आपराधिक मुकदमे के समाप्त होने के बाद भी वास्तविक सत्य का पता लगाना कठिन होता है। न्यायालयों को इन शिकायतों से निपटने में अत्यंत सावधान तथा सतर्क रहना चाहिए तथा वैवाहिक मामलों से निपटने में व्यावहारिक वास्तविकताओं को ध्यान में रखना चाहिए। पति के निकट सम्बन्धियों, जो अलग-अलग शहरों में रहते थे तथा कभी शिकायतकर्ता के निवास स्थान पर नहीं गए अथवा बहुत कम गए, के उत्पीड़न के आरोपों का स्वरूप बिल्कुल अलग होगा। शिकायत के आरोपों की बहुत सावधानी तथा सावधानी से जांच की जानी चाहिए। अनुभव से पता चलता है कि लंबे तथा दीर्घकालीन आपराधिक मुकदमे पक्षकारों के बीच संबंधों में विद्वेष, कटुता तथा कटुता को जन्म देते हैं। यह भी सर्वविदित है कि शिकायतकर्ता द्वारा दायर मामलों में यदि पति या पति के रिश्तेदारों को कुछ दिन भी जेल में रहना पड़े तो इससे सौहार्दपूर्ण समाधान की संभावना पूरी तरह खत्म हो जाएगी। पीड़ा की प्रक्रिया बहुत लंबी और दर्दनाक है।

34. इस मामले को छोड़ने से पहले, हम यह कहना चाहेंगे कि कानून के तहत पूरे प्रावधान पर गंभीरता से पुनर्विचार किया जाना चाहिए। यह भी सर्वविदित है कि बहुत सी शिकायतों में घटना के बारे में बढ़ा-चढ़ाकर बताया जाता है। बहुत से मामलों में अतिशयोक्ति की प्रवृत्ति भी देखने को मिलती है।

35. आपराधिक मुकदमों से सभी संबंधित व्यक्तियों को बहुत कष्ट उठाना पड़ता है। मुकदमे में अंतिम रूप से बरी होने पर भी अपमान की पीड़ा के गहरे जख्मों को मिटाना संभव नहीं है। दुर्भाग्य से इन शिकायतों की एक बड़ी संख्या ने न केवल अदालतों में बाढ़ ला दी है, बल्कि समाज में शांति, सद्भाव और खुशी को प्रभावित करने वाली भारी सामाजिक अशांति भी पैदा की है। अब समय आ गया है कि विधायिका को व्यावहारिक वास्तविकताओं को ध्यान में रखना चाहिए और मौजूदा कानून में उपयुक्त बदलाव करने चाहिए। विधायिका के लिए यह अनिवार्य है कि वह सूचित जनमत और व्यावहारिक वास्तविकताओं को ध्यान में रखे और कानून के प्रासंगिक प्रावधानों में आवश्यक बदलाव करे। हम रजिस्ट्री को निर्देश देते हैं कि वह इस फैसले की एक प्रति विधि आयोग और भारत सरकार के केंद्रीय विधि सचिव को भेजे, जो इसे माननीय विधि एवं न्याय मंत्री के समक्ष समाज के व्यापक हित में उचित कदम उठाने के लिए रख सकते हैं।

36. जब मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर पिछले पैराग्राफ में निर्धारित कानूनी सिद्धांतों की पृष्ठभूमि में विचार किया जाता है, तो अपीलकर्ताओं को आपराधिक मुकदमे की जटिल प्रक्रिया से गुजरने के लिए मजबूर करना अनुचित होगा। न्याय के हित में, हम अपीलकर्ताओं के खिलाफ शिकायत को रद्द करना उचित समझते हैं। परिणामस्वरूप, उच्च न्यायालय के विवादित निर्णय को रद्द किया जाता है। परिणामस्वरूप, यह अपील स्वीकार की जाती है।

एन.जे.

अपील स्वीकार की गई।

(यह अनुवाद अधिवक्ता ज्ञान रंजन, पैनल अनुवादक के द्वारा किया गया।)